17 नवम्बर 2006, कुल पृष्ठ : 8, मूल्य : 2/- आर. एन. आई. 31109/77 RJ / J. P. C / FN-064 / 2006-08

जैन
पथप्रदर्शक

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)

नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

संवररूप धर्म की उत्पत्ति का मूल कारण भेद-विज्ञान है, यही कारण है कि समयसार में आरंभ से ही पर और विकारों से भेद-विज्ञान कराया है।
-आ.कुन्दकुन्द और उनके परमागम,43

वर्ष : 29, अंक : 16 सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** आजीवन शुल्क : 251 रुपये
नवम्बर (द्वितीय), 06 प्रबन्ध सम्पादक : **पं. संजीवकुमार गोधा व पं. जितेन्द्र वि. राठी** वार्षिक शुल्क : 25 रुपये

अष्टाह्निका महापर्व सानन्द सम्पन्न

1. मुम्बई : यहाँ श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षु समाज बृहन्मुम्बई के तत्त्वावधान में दिनांक 29 अक्टूबर से 5 नवम्बर 06 तक अष्टाह्निका महापर्व के अवसर पर मुम्बई के विभिन्न उपनगरों में निम्न विद्वानों द्वारा धर्मप्रभावना हुई -

बोरिवली में पण्डित शैलेषभाई शाह, **दहीसर** में पण्डित चन्दूभाई मेहता, **दादर** में पण्डित नरेन्द्रजी जबलपुर, **मलाड (वे.)** व **एवरशाइन नगर** में पण्डित विपिनजी शास्त्री, **भायन्दर** में पण्डित प्रवेशजी भारिल्ल करेली, **मलाड (ई.)** में पण्डित अनिलजी शास्त्री व पण्डित जितेन्द्रजी शास्त्री तथा डॉ. मानमलजी जैन कोटा के प्रवचनों का लाभ साधर्मियों ने लिया।

2. दिल्ली : यहाँ श्री दिगम्बर जैन कुन्दकुन्द कहान आत्मार्थी ट्रस्ट के निर्देशन में दिल्ली के उपनगर भारतनगर में प्रथम बार श्री गणधर वलय ऋषिमण्डल विधान का आयोजन किया गया। विधि-विधान के सम्पूर्ण कार्य ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री के निर्देशन में पण्डित सुनीलजी धवल भोपाल, पण्डित अमितजी शास्त्री, पण्डित संदीपजी शास्त्री, पण्डित आशीषजी शास्त्री, पण्डित निकलंकजी शास्त्री द्वारा कराये गये। प्रतिदिन रात्रि में ब्र.जतीशचन्दजी शास्त्री के प्रवचनों का लाभ मिला। आत्मार्थी ट्रस्ट पर भी पंच परमेष्ठी विधान सम्पन्न हुआ।

3. देवलाली (महा.) : यहाँ श्री कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट के तत्त्वावधान में पर्व के अवसर पर पण्डित रमेशचन्दजी शास्त्री जयपुर एवं पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा इन्दौर के प्रवचनों एवं कक्षाओं का लाभ प्राप्त हुआ।

4. रतलाम : यहाँ श्री आदिनाथ चैत्यालय हाथीवाला मंदिर में पर्व के अवसर पर 170 तीर्थंकर विधान का आयोजन किया गया, जिसमें 150 साधर्मियों ने धर्मलाभ लिया। इस अवसर पर पण्डित पदमकुमारजी अजमेरा के प्रवचनों का लाभ मिला।

ब्र. यशपालजी द्वारा धर्म प्रभावना

बीना (म.प्र.) : यहाँ श्री दिगम्बर जैन मंदिर बड़ी बजरिया में 18 से 23 अक्टूबर तथा 28 अक्टूबर से 2 नवम्बर, 06 तक लब्धिसार ग्रन्थ पर दोनों समय ब्र. यशपालजी जैन जयपुर के मार्मिक प्रवचनों का लाभ मिला। दिनांक 2 नवम्बर को आगामी 25 जनवरी, 07 से प्रारंभ होनेवाले पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव के प्रचारार्थ जिनेन्द्र-रथ का उद्घाटन हुआ। 2 नवम्बर को ही **खिमलासा में** आचार्य विद्यासागर प्रवचन हॉल में पंचकल्याणक की महिमा विषय पर आपके प्रवचन के अतिरिक्त पण्डित सुदीपजी बीना व श्री वीरेन्द्रजी कठरया का उद्बोधन प्राप्त हुआ।

भोपाल स्थित चौक मंदिर में भी दिनांक 24 अक्टूबर से 27 अक्टूबर, 06 तक आपके द्वारा समयसार कलश 110 एवं अनुभव प्रकाश ग्रन्थ के आधार से मिश्रधर्म अधिकार पर गुरुदेवश्री द्वारा किये गये प्रवचनों का विवेचन किया गया। साथ ही भोपाल ब्रह्मचर्याश्रम में आपके तथा पण्डित राजमलजी द्वारा मोक्षमार्गप्रकाशक के सातवें अधिकार पर तत्त्वचर्चा का आयोजन सम्पन्न हुआ।

अहिंसक भारत में कैसी घड़ियाँ आई, अब तैयार होंगे ऐज्युकेटेड कसाई

महापुरुषों की जन्मस्थली हिन्दुस्तान की तपोभूमि पर दिनों दिन हिंसा व हिंसक प्रवृत्तियाँ बढ़ती जा रही है, जो कि अत्यधिक दुखद घटना है। दूध-दही और घी के लिये पहिचानी जानेवाली इस भारत भूमि पर अब कसाईयों के लिये मीट टैक्नॉलोजी का एक वर्षीय कोर्स तैयार किया गया है।

राष्ट्रीय इन्दिरा गाँधी ओपन युनिवर्सिटी भोपाल अब पढ़े लिखे युवकों को उक्त विषय पर केन्द्रित कर आधुनिक कसाई बनाने के गुर सिखायेगी। इसके तहत माँस के व्यवसाय से संबंधित सभी विषयों का वैज्ञानिक अध्ययन कराया जायेगा।

उक्त पाठ्यक्रम ने अहिंसाप्रेमी शाकाहारी जनता की भावनाओं को आहत किया है; वस्तुत: यह पाठ्यक्रम मांसाहार को बढ़ावा देनेवाला है।

'इग्नू' के इस हिंसक कोर्स का देशभर के सभी अहिंसाप्रेमी कार्यकर्ताओं एवं शाकाहारी समाज को प्रचण्ड विरोध करना है। इस बारे में अपने विरोधपत्र- 1. मुख्यमंत्री, म.प्र. भोपाल 2. कुलपति, राष्ट्रीय इन्दिरा गाँधी ओपन युनिवर्सिटी भोपाल को भेजें।

अपने परिचित राजनेताओं एवं प्रशासनिक अधिकारियों से इस संबंध में चर्चा कर यह पाठ्यक्रम लागू होने से पहले ही निरस्त करने का पुरुषार्थ कर अहिंसक होने का अपना कर्तव्य निभायें। आपके द्वारा इस संबंध में की गई कार्यवाही तथा अधिक जानकारी के लिये निम्न पते पर शीघ्र संपर्क करें।

- प्राणीमित्र, नितेश नागोता जैन,
अखिल भारतीय सुधर्म अहिंसा प्रचार समिति,
175, जैन बोर्डिंग हाउस, भवानीमंडी (राज.)
मो. 09413101489, 9829480152

सम्पादकीय –

ये तो सोचा ही नहीं

(गतांक से आगे ...) – रतनचन्द भारिल्ल

१५. हार में भी जीत छिपी होती है

क्या सम्राट सिकन्दर के बारे में नहीं सुना ? उसने अनेक देशों को लूट–खसोटकर अरबों की सम्पत्ति अपने कब्जे में कर ली थी। अन्त में जब उसे पता चला कि मौत का पैगाम आ गया है, तब उसे अपने किए पापों से आत्मग्लानि हुई।

वह सोचने लगा ह्न 'अरे ! मैंने यह क्या किया ? तब उसने स्वयं कहा कि ह्न ''मेरी अर्जित सम्पत्ति मेरी अर्थी के आगे पीछे प्रदर्शित करते हुए मेरी अर्थी के साथ ले जाना और मेरे मुर्दा शरीर के दोनों हाथ बाहर निकाल देना, ताकि जगत मेरे जनाजे से मेरी खोटी करनी के खोटे नतीजे से कुछ सबक सीख सके।'

उसकी अन्तिम इच्छा के अनुसार संसार की असारता और लूट–खसौट के दु:खद नतीजों का ज्ञान कराने के उद्देश्य से उसकी शवयात्रा के साथ सारा लूट का माल जुलूस के रूप में पीछे लगा दिया गया और उसके दोनों खाली हाथ अर्थी के बाहर निकाल दिये गये। एक फकीर साथ–साथ गाता जा रहा था ह्न

जाता सिकन्दर बादशाह, सभी हाली मवाली हैं।
सभी है साथ में दौलत, मगर दो हाथ खाली हैं।।''

ज्ञानेशजी का प्रवचन सुनकर तो सेठ साहब गद्गद् हो गए। सेठ ही क्या, उस समय तो सभी की आँखे गीली हो गईं। लोग रूमाल निकाल–निकाल कर अपनी आँखें पोंछने लगे।

विद्याभूषण ने कहा ह्न ''भाई मैं तो रुकूँगा ही और मैं तो कहूँगा कि तुम भी रुको। इतना सुनने–समझने के बाद किस मायाजाल में फँसे हो ?''

ज्ञानेश संस्कृत–प्राकृत नहीं जानता था, परन्तु उसने सत्या–न्वेषण में कोई कोर–कसर नहीं रखी। आध्यात्मिक ज्ञानगंगा में गहरे गोते लगाये; क्योंकि उसने लक्ष्य बनाया था, दृढ़ संकल्प किया था कि मैं सत्य की शोध करके ही रहूँगा और इसका लाभ मुझे तो मिलेगा ही, जन–जन तक भी मैं इस ज्ञान गंगा को पहुँचाऊँगा।

उसने हारकर भी हारना नहीं सीखा। उसने इतिहास में पढ़ा था कि मोहम्मद गौरी पृथ्वीराज चौहान से एक बार नहीं, दो बार नहीं, तीन बार नहीं; पूरे सत्रह बार हारा फिर भी उसने हार नहीं मानी। यदि वह सत्रह बार में कहीं एक बार भी हारकर बैठ जाता तो उसकी अठारहवीं बार की जीत उसकी विजय का इतिहास नहीं बन पाती।अठारह वीं बार की जीत ने सत्तरह बार की हार को भी अविस्मरणीय इतिहास बना दिया।

ज्ञानेश यह भी जानता था कि अत्यन्त साधारण से परिवार में एवं छोटे से गाँव में जन्मे अब्राहमलिंकन ने अपने जीवन में क्या–क्या मुसीबते नहीं झेलीं ? मानो वह भी हार का पर्याय बन गया था, अनेक बार हारा; पर निराश नहीं हुआ; क्योंकि उसका एक स्वप्न था, एक लक्ष्य था कि 'मैं एक न एक दिन सर्वोच्च सत्ता हासिल करके ही रहूँगा। फलस्वरूप वह अन्त में अमेरिका जैसे समृद्ध और विकसित देश का राष्ट्रपति बना।

ज्ञानेश ने भी इन घटनाओं से प्रेरणा पाकर वर्तमान में समय की स्वतंत्रता और तत्त्व प्रचार–प्रसार हेतु आर्थिक स्वतंत्रता के साथ परलोक में आत्मा की स्वतंत्रता (मुक्ति) पाने का लक्ष्य बनाया है और वह इस दिशा में पूर्ण उत्साह के साथ सक्रिय है। उसे विश्वास है कि मैं अपने लक्ष्य को पाकर ही रहूँगा।

प्रथम लक्ष्य के करीब तो वह पहुँच चुका है और दूसरे एवं तीसरे लक्ष्य की ओर अग्रसर है। उसने कहीं यह पंक्ति पढ़ी थी ह्न नर हो न निराश करो मन को।

बस, फिर क्या था, वह दृढ़ संकल्प के साथ जुटा रहा और अपने लक्ष्य की ओर बढ़ता रहा।

यह छोटी–सी ज्ञानगोष्ठी एक दिन इतना विशाल रूप धारण कर लेगी, ज्ञानेश को भी इसका पता नहीं था, पर उसका एक स्वप्न था, एक लक्ष्य था कि यह ज्ञान की धारा सारे विश्व में फैलना चाहिए।

उसने मोहम्मदगौरी और अब्राहमलिंकन के इतिहास से यही सीखा कि हार में भी जीत छिपी होती है। अत: हारने से निराश नहीं होना चाहिए। बस इसी विचार से ज्ञानेश अपने लक्ष्य के प्रति सजग है। क्या ज्ञानेश के सामने समस्यायें नहीं आतीं ? पर उसके सामने भी एक लक्ष्य है। उस लक्ष्य के साथ उसकी हार्दिक लगन, व्यवस्थित मति, उदारवृत्ति, गुण–ग्राहकता, निश्छलहृदय, सरलस्वभाव, नियमित दैनिकचर्या, सत्यान्वेषण की सूक्ष्मदृष्टि, दृढ़ संकल्प और प्राप्त ज्ञान के प्रचार–प्रसार की नि:स्वार्थ पवित्र व प्रबल भावना है। इन्हीं कारणों से देश–विदेश के कोने–कोने से धर्मप्रेमी लोग उससे जुड़ते जा रहे हैं।''

टन.....टनन.....टन..टन.....करते ज्योंही घड़ी का नौवाँ घंटा बजा, त्योंही ॐकार ध्वनि के साथ ज्ञानेश का प्रात:कालीन प्रवचन प्रारम्भ हो गया। ''मन का शरीर से घना संबंध होने से यदि अन्दर में क्रोध भाव है तो मुखाकृति पर भी क्रोध की रेखायें दिखाई देने लगतीं हैं, भृकुटी तन जातीं है, आँखें लाल हो जाती हैं, ओष्ठ फड़कने लगते हैं और काया काँपने लगती है। पर ध्यान रहे, पापबन्ध अंतरंग आत्मा में हुए क्रोध आदि मनोविकारों या भावों से ही होता है, बाह्य शारीरिक विकृति से नहीं। शारीरिक चिह्न तो मात्र अंतरंग भावों की अभिव्यक्ति करते हैं, उनसे पुण्य–पाप नहीं होता।

इसी तरह जब अन्तरंग में भगवान की भक्ति का शुभभाव होता है तो बाहर में तदनुकूल यथायोग्य अष्टांग नमस्कार आदि

शारीरिक क्रियायें भी होतीं ही हैं।''

अंतरंग–बहिरंग सम्बन्ध का ज्ञान कराते हए ज्ञानेश ने आगे कहा ह्न ''अन्तरंग में जिनके सम्पूर्ण समताभाव हो, वीतराग परिणति हो तो बाहर में उनकी मुद्रा परमशान्त ही दिखाई देगी। न हँसमुख न उदास। ऐसा ही सहज स्वतंत्र संबंध होता है अन्तरंग–बहिरंग भावों का। इसलिए कहा जाता है कि 'भावना भवनाशनी ह्न भावना भववर्धनी' भावों से ही संसार में जन्म–मरण के दु:ख का नाश होता है और भावों से ही जन्म–मरण का दु:ख बढ़ता है।

इसीप्रकार पूर्ण पवित्र भावना से पूर्ण सावधानीपूर्वक डॉक्टर के द्वारा रोगी को बचाने के प्रयत्नों के बावजूद यदि आपरेशन की टेबल पर ही रोगी का प्राणांत हो जाता है तो डॉक्टर को हिंसाजनित पापबंध नहीं होता। वैसे ही चार हाथ आगे जमीन देखते हुए चलने पर भी यदि पैर के नीचे कोई सूक्ष्म जीव मर जाता है तो मारने का अभिप्राय नहीं होने से साधु को भी हिंसा का पाप नहीं लगता।

वस्तुत: आत्मा में रागादि भावों की उत्पत्ति होना ही हिंसा है तथा आत्मा में रागादि भावों की उत्पत्ति न होना ही अहिंसा है। तात्पर्य यह है कि पाप–पुण्य एवं धर्म–अधर्म जीवों के भावों पर निर्भर करता है। जिन कार्यों में जैसी भावनायें जुड़ीं होंगीं, कर्मफल उनके अनुसार ही प्राप्त होगा। हिंसा की भाँति झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह आदि पापों एवं धर्म–अधर्म के विषय में भी समझ लेना चाहिए। आत्मा के घातक होने से झूठ–चोरी–कुशील व परिग्रह पाप भी हिंसा में ही गर्भित हैं। सब आत्मघाती होने से हिंसा के ही विविध रूप हैं; जोकि महादु:ख दाता होने से सर्वथा त्याज्य हैं।''

समय भी लगभग हो ही चुका था। सभा विसर्जित हुई। सभी लोग भावुक हृदय से अपने–अपने निवास की ओर जाते हुए मार्ग में ज्ञानेश के प्रवचन की चर्चा एवं प्रशंसा करते जा रहे थे। ●

16. पश्चात्ताप भी पाप है

रात के सात बजने को थे कि ज्ञानेशजी अपने निश्चित समय के अनुसार चर्चा करने अपने आसन पर जाकर बैठ गये। सात बजते–बजते सब श्रोता भी आ गये और जिसे जहाँ जगह मिली, चुपचाप बैठ गये।

ज्ञानेशजी ने मोहन को आगे बुलाया तो वहाँ बैठे सभी व्यक्तियों की निगाहें प्रश्नसूचक मुद्रा में मोहन की ओर मुड़ गईं, पर कहा किसी ने कुछ नहीं; क्योंकि सबको उसके प्रति सहानुभूति तो थी ही, ज्ञानेशजी के प्रति भी ऐसी श्रद्धा थी कि ज्ञानेशजी जो भी करेंगे, ठीक ही करेंगे।

उन्हें यह भी पता हो गया था कि ज्ञानेशजी ने मोहन को अभी–अभी जीवन–दान दिया है, मौत के मुँह से बचाया है। ज्ञानेशजी से सहानुभूति एवं स्नेह पाकर मोहन मानो कृतार्थ हो गया था। वह आगे आकर चुपचाप नीची निगाहें करके सहमा–सहमा सा बैठ गया। दो मिनट तक जब कहीं से कोई प्रश्न नहीं पूछा गया तो ज्ञानेशजी के चित्त में जो चिन्तन चल रहा था, उसे ही चर्चित करने के लिए मोहन के चिन्ताग्रस्त चेहरे को प्रकरण का मुद्दा बनाकर उसने कहा ह्न

'मोहन ! तुम्हारे मुख–मण्डल पर जो रेखायें हम देख रहे हैं, वे रेखायें तुम्हारे मनोगत भावों को बता रहीं हैं कि तुम इस समय किस भाव में विचर रहे हो ? तुम्हारा मनोगत भाव तुम्हारे चेहरे पर स्पष्ट झलक रहा है। निश्चित ही तुम्हारी सोच किसी कषाय के कुचक्र में फंसी है, राग–द्वेष के जंजाल में उलझी है, मोह–माया से मलिन हो रही है अथवा कहीं किसी संयोग–वियोग की आशंका की आँधी में किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो रही है। जानते हो इस मानसिक सोच के रूप में तुम्हें यह कौन–सा 'ध्यान' हो रहा है ? और इसका क्या फल होगा ?'

ज्ञानेशजी की बातें सुनकर मोहन स्तब्ध रह गया। उसने मन ही मन सोचा ह्न ''ध्यान ? मैंने तो आज तक कभी कोई ध्यान किया ही नहीं, मुझे ध्यान करना आता ही कहाँ है ? मैंने कभी ध्यान करने का सोचा भी नहीं। ध्यान करना तो साधु–संतों का काम है। पिता के निधन के बाद मुझे तो दिन–रात घी, नमक, तेल, तंदुल और परिवार की चिन्ता में धर्म ध्यान करने की बात सोचने की भी फुर्सत नहीं मिली। क्या चिन्ता–फिकर करना भी कोई ध्यान हो सकता है ? मेरे माथे पर चिंता की रेखाएँ हो सकतीं हैं, पर माथे की उन लकीरों में ऐसा क्या लिखा है जो ज्ञानेशजी ने पढ़ लिया है? मैंने तो इस विषय में किसी से कुछ कहा भी नहीं है। ये अन्तर्यामी कब से बन गये ?''

मोहन की चिन्तित मुद्रा को देख ज्ञानेशजी ने पुन: कहाह्न ''मैं समझ गया कि तुम क्या सोच रहे हो ? किस चिन्ता में घुल रहे हो? मोहन तुम दुर्व्यसनों से तो मुक्त हो गये; पर पश्चात्ताप की ज्वाला में अभी भी जल रहे हो। तुम्हें पता नहीं, ये पश्चाताप की ज्वाला में जलती भावना भी तुम्हें इस दु:खद संसार सागर से पार नहीं होने देगी। इसे शास्त्रों में आर्तध्यान कहते हैं।''

एक श्रोता ने पूछा ह्न 'क्या ध्यान भी कई तरह के होते हैं ?'

ज्ञानेश ने उत्तर दिया ह्न ''हाँ, मन में जो दूसरों के बुरा करने के या भोग के भाव होते हैं, ये अशुभ भाव खोटे आर्त्तध्यान हैं।

देखो ! यद्यपि बाहर में प्रगट पाप करने से पत्नी रोकती है, माता–पिता समझाते हैं, पुत्र–पुत्रियों का राग पाप न करने की परोक्ष प्रेरणा देता रहता है।

काया से यदि कोई पाप करता है तो सरकार भी दण्ड देती है, यदि वाणी से कोई पाप करता है तो समाज उसका बहिष्कार कर देती है; परन्तु यदि कोई भावों में पाप भाव रखे, दु:खी मन से पश्चात्ताप रूप रूप आग की ज्वाला में जले तो उस पर किसी का वश नहीं चलता। उन पर तो धर्म उपदेश ही अंकुश लगा सकता है, जो हमें बताता है कि पाप भाव का फल कुगति है।''

इस तरह मोहन ज्ञानेश की चर्चा से पूरी तरह संतुष्ट था। उसे ऐसा लगा ह्न सचमुच तो ये ही बातें सुनने जैसी हैं। यह सोचते हुए वह अपने अतीत में खो गया, अपने में अबतक हुई पाप परिणति का आत्म–निरीक्षण करने लगा। (क्रमश:)

भगवान महावीर निर्वाण उत्सव एवं शिक्षण-शिविर सम्पन्न

1. मंगलायतन–अलीगढ़ : यहाँ दिनांक 20 से 24 अक्टूबर तक श्री कुन्दकुन्द प्रवचन प्रसारण संस्थान उज्जैन एवं श्री आदिनाथ कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट अलीगढ़ के तत्त्वावधान में निर्वाण महोत्सव एवं शिक्षण शिविर सम्पन्न हुआ।

इस अवसर पर प्रतिदिन गुरुदेवश्री के सी.डी. प्रवचनों के अतिरिक्त पण्डित कैलाशचन्दजी अलीगढ़, पण्डित विमलदादाजी झांझरी उज्जैन, पण्डित बाबूभाई महेता फतेपुर, ब्र. सुमतप्रकाशजी खनियांधाना, पण्डित प्रदीपकुमारजी झांझरी उज्जैन, डॉ. मुकेशजी शास्त्री विदिशा, पण्डित राजकुमारजी शास्त्री बांसवाड़ा, पण्डित अरहंतप्रकाशजी झांझरी उज्जैन, पण्डित तेजकुमारजी गंगवाल इन्दौर, पण्डित शांतिलालजी सौगाणी महिदपुर तथा स्थानीय विद्वानों में पण्डित अशोककुमारजी लुहाड़िया, पण्डित राकेशकुमारजी शास्त्री, श्री पवनजी जैन, पण्डित देवेन्द्रकुमारजी एवं पण्डित सुधीरजी शास्त्री के प्रवचन एवं कक्षाओं का लाभ मिला।

इस अवसर पर ब्र. अभिनन्दनजी शास्त्री के निर्देशन में पण्डित संजयजी शास्त्री एवं श्री भरतजी मेहता सूरत के सान्निध्य में भगवान महावीरस्वामी पंचकल्याणक विधान सम्पन्न हुआ।

निर्वाणोत्सव के दिन कैलाश पर्वत पर निर्वाण लाडू अर्पितकर अहिंसा रैली निकाली गई। 23 अक्टूबर को पण्डित राकेशजी शास्त्री को द्रव्य–गुण–पर्याय पर लिखित शोध विषय के लिये विशेषरूप से सम्मानित किया गया।

2. छिन्दवाड़ा (म.प्र.) : यहाँ श्री आदिनाथ दिगम्बर जैन मंदिर गोलगंज में दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल एवं अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन के संयुक्त तत्त्वावधान में निर्वाण महोत्सव उल्लासपूर्वक मनाया गया।

इस अवसर पर भगवान महावीर और गौतम गणधर की पूजनोपरान्त शोभायात्रा निकाली गई। साथ ही विगत 14 वर्षों से चलाई जा रही अहिंसा यज्ञ की मुहिम के अन्तर्गत स्कूली छात्र–छात्रा तथा समाज के लगभग 5000 सदस्यों ने फटाके नहीं जलाने की प्रतिज्ञा ली तथा फटाकों के रूप में एकत्रित राशि के माध्यम से फैडरेशन के सदस्यों के साथ जिला चिकित्सालय, टी.बी. हॉस्पिटल एवं वृद्धाश्रम जाकर फल एवं मिष्ठानों का वितरण किया।

टी.बी. हॉस्पिटल में फल बाँटते समय छिन्दवाड़ा के निकट **ग्राम घरमी** से उपचार के लिये भर्ती रोगी बालसिंह ने मौसमी देखकर जब यह कहा कि इसे क्या कहते हैं और यह कैसे खाते हैं ? तो सभी की आँखे नम हो गई। जरा सोचिये हम करोड़ों रुपयों की राशि फटाकों पर बरबाद करते हैं और देश में अभी भी ऐसे लोग हैं, जिन्हें अभी तक फलों के नाम, रूप व स्वाद का भी पता नहीं है। **– दीपकराज जैन**

3. हिंगोली (महा.) : सकल दिगम्बर जैन समाज हिंगोली द्वारा भगवान महावीर निर्वाणोत्सव के उपलक्ष में दिनांक 24 से 28 अक्टूबर तक पंचदिवसीय शिविर का आयोजन किया गया।

शिविर में पण्डित संतोषजी साहूजी, पण्डित आशीषजी रोकडे, पण्डित प्रजयजी कान्हेड, पण्डित लवलेशजी महाजन, पण्डित सचिनजी गोरे, कुमारी प्रीति भूरे व कुमारी दीपाली कान्हेड द्वारा बालबोध व वीतराग–विज्ञान पाठमाला भाग–1,2,3 की कक्षाओं का आयोजन किया गया।

प्रेरक प्रसंग –

जीवन्त मूर्तियों के प्रतिष्ठाचार्य : गणेशप्रसादजी वर्णी

श्री दिगम्बर जैन समाज में वर्णीजी एक ऐसे महापुरुष हुये हैं, जिनके प्रति जैनसमाज का प्रत्येक व्यक्ति सदा श्रद्धावनत रहता है। उनका समग्र जीवन एवं जीवन की घटनायें हमें धर्ममार्ग की ओर सहज ही प्रेरित करतीं है। ऐसा ही एक प्रसंग मैंने अपनी माँ से सुना था –

बात 55–60 वर्ष पुरानी है। गणेशप्रसादजी वर्णी उन दिनों शाहपुर–गणेशगंज में विराज रहे थे। प्रवचनों में अच्छी भीड होती थी। एकदिन प्रवचनोपरान्त एक श्रेष्ठी पुरुष ने वर्णीजी के सामने अपना विचार व्यक्त किया– 'महाराज मैं पंचकल्याणक और गजरथ महोत्सव कराना चाहता हूँ। सो आपकी राय चाहिये।'

वर्णीजी बोले : भैया ! अच्छी बात है, करो धर्म प्रभावना, पर यह तो बताओ धन कितना खर्च करोगे ?

श्रेष्ठी : यही कोई पाँच हजार रुपये।

वर्णीजी : एक बात बताओ, पंचकल्याणक क्या है ? इससे क्या होगा?

श्रेष्ठी : महाराज ! आप ही समझाइये ।

वर्णीजी : हम तो ये जानते हैं कि बहुत भीड़ जुटती है, हाथी के रथ चलते हैं और रथ चलवाने वाले को सिंघई पदवी मिलती है। मूर्तियों की प्राण–प्रतिष्ठा होती है, सो उनकी पूजा होने लगती है और तुम बताओ भैया।

श्रेष्ठी : महाराज बात तो ऐसी ही है।

वर्णीजी : तो फिर क्या करना है भैया !

श्रेष्ठी : आप जैसी आज्ञा करें।

वर्णीजी : तो एक काम करो, पैसा ले आओ।

उसने पैसे लाकर वर्णीजी के सामने रखे और बोला अब क्या करना है ?

तब वर्णीजी ने सारी समाज की सभा बुलवाई और घोषणा की – भाईयों ! इन श्रेष्ठीवर्य की गजरथ चलवाने की इच्छा है सो हम आप सब लोगों की राय चाहते हैं। आप लोग अपना मत व्यक्त करें।

समस्त सभा ने कहा – जैसी आपकी आज्ञा हो महाराज वैसा ही होगा। हम तन–मन–धन से तैयार हैं।

वर्णीजी : हमारा तो आप सबसे न्यारा विचार है। वह ऐसा कि एक जैन पाठशाला खोली जाये।

(वर्णीजी के इतना कहते ही सारी समाज ने करतल ध्वनि से अनुमोदना की तथा वर्णीजी का जयकारा लगाया ।)

...और इसके बदले में आपको सिंघई की पदवी देना चाहते हैं।.. फिर 3 दिन तक मंगल पंचपरमेष्ठी विधान हुआ, चौथे दिवस अत्यन्त हर्ष से प्रीतिभोज हुआ। श्रेष्ठीवर्य को पगड़ी पहनाई गयी, तिलक लगाकर सिंघई की पदवी दी गई।

फिर वर्णीजी बोले : भाईयों ! मूर्तियाँ तो मंदिर में बहुत है, परन्तु अब उनके पूजनेवाले तैयार करना है, सभी के घरों में जो छोटे–छोटे बालक–बालिकायें हैं, वे जीवन्त मूर्तियाँ हैं, उनको पाठशाला पहुँचाकर जैनधर्म के संस्कार देकर उनकी प्राण प्रतिष्ठा करने का समय है। यही करना चाहिये। तभी अपना जैन कुल में आना, मंदिर बनवाना सार्थक है, अन्यथा सब बेकार है। **– विनोदकुमार मोदी, दलपतपुर**

तत्त्वचर्चा

प्रवचनसार का सार 63

– डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे ...)

इसके बाद, ''शुभोपयोगी श्रमण को किस समय प्रवृत्ति करना योग्य है और किस समय नहीं'' यह बतानेवाली 252वीं गाथा इसप्रकार है –

रोगेण वा छुधाए तण्हाए वा समेण वा रूढं।
दिट्ठा समणं साहू पडिवज्जदु आदसत्तीए।।२५२।।

(हरिगीत)

श्रम रोग भूखरु प्यास से आक्रान्त हैं जो श्रमणजन।
उन्हें लखकर शक्ति के अनुसार वैयावृत करो।।२५२।।

रोग से, क्षुधा से, तृषा से अथवा श्रम से आक्रांत श्रमण को देखकर साधु अपनी शक्ति के अनुसार वैयावृत्यादि करो।

इस गाथा की टीका का भाव इसप्रकार है ह्न

''जब शुद्धात्मपरिणति को प्राप्त श्रमण को, उससे च्युत करे ऐसा कारण – कोई भी उपसर्ग – आ जाय, तब वह काल, शुभोपयोगी को अपनी शक्ति के अनुसार प्रतिकार करने की इच्छारूप प्रवृत्ति का काल है; और उसके अतिरिक्त का काल अपनी शुद्धात्मपरिणति को प्राप्ति के लिये केवल निवृत्ति का काल है।''

आचार्य इस संदर्भ में एक–एक बात पर विचार कर रहे हैं कि मुनियों की सेवा या वैयावृत्ति कब और कैसे करना ?

पहले तो आचार्यदेव ने यह बताया था कि किनकी सेवा करना, कैसे करना तथा अपने संयम का घात करके सेवा नहीं करना तथा धर्मवृद्धि के लिए सेवा करना। अब, इस गाथा में आचार्य सेवा का काल निर्धारण कर रहे हैं कि सेवा कब करना।

यहाँ काल का अर्थ सुबह 7 बजे या शाम को 6 बजे – इसप्रकार का समय नहीं है, अपितु यहाँ काल का अर्थ यह है कि जब कोई मुनिराज बीमार हो या तकलीफ में हो; जिससे उनका उपयोग अपनी आत्मा में नहीं लग रहा हो, तब उनकी सेवा करना, जिससे उनका उपयोग स्थिर हो जाय।

इसी गाथा का भावार्थ इसप्रकार है ह्न

''जब शुद्धात्मपरिणति को प्राप्त श्रमण के स्वस्थ भाव का नाश करनेवाला रोगादिक आ जाय; तब उस समय शुभोपयोगी साधु को उनकी सेवा की इच्छारूप प्रवृत्ति होती है, और शेष काल में शुद्धात्म–परिणति को प्राप्त करने के लिये निज अनुष्ठान होता है।''

भावार्थ में कथित स्वस्थभाव का तात्पर्य आत्मा में लीन होने का भाव है तथा उस स्वस्थभाव का नाश करनेवाली बीमारी के आ जाने पर शुभोपयोगी साधु उनकी सेवा करते हैं।

इसके बाद ''शुभोपयोगी श्रमण को लोगों के साथ बातचीत की प्रवृत्ति किस निमित्त से करना योग्य है और किस निमित्त से नहीं।''

यह बतानेवाली अगली गाथा इसप्रकार है –

वेज्जावच्चणिमित्तं गिलाणगुरुबालवुड्ढसमणाणं।
लोगिगजणसंभासा ण णिंदिदा वा सुहोवजुदा।।२५३।।

(हरिगीत)

ग्लान गुरु अर वृद्ध बालक श्रमण सेवा निमित्त से।
निंदित नहीं शुभभावमय संवाद लौकिकजनों से।।२५३।।

रोगी, गुरु, बाल तथा वृद्ध श्रमणों की सेवा के निमित्त से, शुभोपयोग युक्त लौकिकजनों के साथ की बातचीत निन्दित नहीं है।

गृहस्थ लौकिकजन कहलाते हैं तथा मुनियों को ऐसे लौकिकजनों के साथ बातचीत करना सर्वथा वर्जित है; किन्तु वैयावृत्ति के निमित्त से सुविधा जुटाने के लिए यदि मुनिराज लौकिकजनों से बात करते हैं तो वह निन्दित नहीं हैं।

शुभोपयोगी मुनियों को शुभोपयोग के काल में बात करना निंदित नहीं है; किन्तु शुद्धोपयोग के काल को छोड़कर बात करना निंदित है।

इसी संदर्भ में इस गाथा की टीका भी द्रष्टव्य है –

''शुद्धात्मपरिणति को प्राप्त रोगी, गुरु, बाल और वृद्ध श्रमणों की सेवा के निमित्त से ही शुभोपयोगी श्रमण को शुद्धात्मपरिणतिशून्य लोगों के साथ बातचीत प्रसिद्ध है, निषिद्ध नहीं है; किन्तु अन्य निमित्त से भी प्रसिद्ध हो ह्न ऐसा नहीं है।''

टीका में कथित शुद्धात्मपरिणतिशून्य लोगों से तात्पर्य मिथ्यादृष्टि लोगों से है; क्योंकि सम्यग्दृष्टि तो शुद्धात्मपरिणतिवाले हैं। उन मिथ्यादृष्टि लोगों से भी रोगी, गुरु, बाल और वृद्ध श्रमणों की सेवा के निमित्त से ही बातचीत कर सकते हैं तथा यदि अन्य कारण से बातचीत करें तो वह ठीक नहीं है।

पंचकल्याणकों में जब केवलज्ञान कल्याणक होता है, उस दिन प्रसंग होने से मैं मुनियों की चर्या पर थोड़ी चर्चा करता हूँ। उस दिन मैं यह भी बताता हूँ कि मुनिराज खड़े–खड़े आहार क्यों लेते हैं, बैठकर क्यों नहीं लेते हैं, जब मुनिराज आहार करने जाते हैं तो मौन होकर क्यों जाते हैं। मुनिराज खड़े–खड़े आहार इसलिए लेते हैं; क्योंकि जिस जगह वे आहार लेने जा रहे हैं, वह गृहस्थ का घर है तथा गृहस्थ का घर मुनिराजों के बैठने लायक नहीं होता है। मुनिराज मौन लेकर इसलिए जाते हैं; क्योंकि भाषा दूसरों से जोड़ती है और मुनिराज को किसी से जुड़ना ही नहीं है। मुनिराजों को यदि आहार की मजबूरी न हो तो वे गृहस्थ के घर जाए ही नहीं; किन्तु आहार हेतु गृहस्थ के घर जाना पड़ता है, इसलिए वे पहले से ही मौन का कवच पहिनकर जाते हैं।

इस संबंध में कुछ विशेष जानने की जिज्ञासा हो तो **पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव** नामक पुस्तक का अध्ययन करना चाहिए।

अब, आचार्य 254 वीं गाथा में यह बतलाते हैं कि किसके शुभोपयोग गौण होता है और किसके मुख्य होता है –

एसा पसत्थभूदा समणाणं वा पुणो घरत्थाणं।
चरिया परेत्ति भणिदा ता एव परं लहदि सोक्खं।।२५४।।

(हरिगीत)

प्रशस्त चर्या श्रमण के हो गौण किन्तु गृहीजन।
के मुख्य होती है सदा अर वे उसी से सुखी हो।।२५४।।

यह प्रशस्तभूत चर्या श्रमणों के (गौण) होती है और गृहस्थों के तो

मुख्य होती है, ऐसा (शास्त्रों में) कहा है; उसी से (परम्परा से) गृहस्थ परमसौख्य को प्राप्त होता है।

इस गाथा के 'घरत्थाणं' शब्द के संबंध में भाषा की दृष्टि से कुछ बताना चाहता हूँ। संस्कृत में घर को 'गृह' बोलते हैं। 'घरत्थाणं' अर्थात् घर में रहनेवाला। हिन्दी में जो यह 'घर' शब्द आया है, यह प्राकृत से आया है, संस्कृत से नहीं आया है। यह प्राकृत से अपभ्रंश में होता हुआ हिन्दी में आया है। संस्कृत में 'गृह' शब्द है तथा हिन्दी, अपभ्रंश और प्राकृत में 'घर' शब्द है।

अब प्रश्न यह उपस्थित होता है कि गृह से घर कैसे बन गया ? समझने की बात यह है कि गृह बोलने में कठिन है तथा 'घर' बोलने में उसकी अपेक्षा सरल है। लोकभाषा हमेशा सुविधामुखी होती है; अतएव 'गृह' की अपेक्षा घर बोलने में सरल होने से 'घर' का प्रचलन हो गया।

'गृह' से 'घर' में परिवर्तन कैसे हुआ ? यह भी समझने योग्य है। गृह में तीन अक्षर हैं ह्न ग, ह, र तथा 'घर' में भी तीन अक्षर हैं – ग, र, ह। अंग्रेजी भाषा में रोमनलिपि में गृह को GRAH लिखा जाता है तथा घर को GHAR लिखा जाता है दोनों में GRH और A अक्षर हैं। बस इतना ही अन्तर है कि एक में H पहले है तथा एक में बाद में। इनका परस्पर स्थान परिवर्तन हो गया है। लोकभाषा में मुख सुख के लिए स्थान परिवर्तन कर दिया जाता है। जब 'G' और 'H' मिलते हैं तो 'घ' बन जाता है तथा 'घर' के 'घ' में ग और ह मिले हुए हैं। 'घ' वास्तव में मूल अक्षर नहीं है; अपितु संयुक्त अक्षर है। इसप्रकार स्थान परिवर्तन के कारण संस्कृत का गृह हिन्दी, अपभ्रंश और प्राकृत में घर बन गया।

गाथा में यह कहा है कि प्रशस्तभूतचर्या अथवा सेवा करने का काम मुख्यरूप से तो गृहस्थों का है और गौणरूप से मुनिराजों का है; क्योंकि मुनिराजों का 6 घड़ी सुबह, 6 घड़ी दोपहर और ६ घड़ी सायं का समय तो सामायिक का है तथा मुनिराज सेवा करने के लिये अपनी सामायिक नहीं छोड़ेंगे। इसलिए मुनिराजों को सेवा के लिए कम समय मिलने के कारण गौणरूप से उनका काम कहा है।

इसके बाद इसी में एक प्रकरण यह भी है कि लोग कहते हैं कि सेवा तो सेवा है, किसी की भी करो। अरे भाई ! ऐसा नहीं है। इसी संदर्भ में इसमें एक बहुत अच्छा उदाहरण दिया है कि जैसे बीज एक होने पर भी जमीन के अंतर से फल में अंतर आता है; वैसे ही जिनकी सेवा की जा रही है, उनमें अंतर होने से सेवा एक सी करने पर भी फल में अंतर आता है।

जिसप्रकार अनार का एक बीज कश्मीर या अफगानिस्तान में बोने पर अनार का दाना इतना बढ़िया पकता है कि मुँह में रखते ही घुल जाता है तथा वही बीज राजस्थान में बोने पर एक तो वृक्ष उगेगा ही नहीं, उगेगा तो फल नहीं लगेंगे। यदि फल लगेंगे भी तो मुँह में रखने के काबिल नहीं होंगे।

इसीप्रकार अमेरिका और लंदन का भुट्टा इतना मीठा होता है कि और कुछ अच्छा ही नहीं लगता। भारत के भुट्टे के दानों से चार गुना बड़ा दाना होता है तथा अमेरिका में भुट्टे का तेल ही प्रयुक्त होता है। जैसे भारत में मूँगफली और सरसों का तेल ही प्रयोग करते हैं; वैसे ही अमेरिका में कॉर्न ऑइल अर्थात् भुट्टे का तेल प्रयोग करते हैं। अपने भारत में वैसा भुट्टा नहीं होता, जैसा अमेरिका में होता है। यह जमीन का अंतर है।

जिसप्रकार जमीन में अंतर होने से बीज एक होने पर भी फल में अंतर आता है; उसीप्रकार जिनकी सेवा की जा रही है, उनमें अंतर होने से सेवा एक–सी करने पर भी फल में अंतर आता है।

तदनन्तर एक प्रकरण यह भी है कि दो मुनिराज एक दूसरे को जानते नहीं हैं तथा यदि वे दोनों अचानक मिलें तो वे क्या करें ?

आजकल तो सभी महाराज प्रसिद्ध हो जाते हैं तथा एक–दूसरे को जानते हैं तथा लोग भी दौड़–दौड़ कर बता देते हैं। पहले तो ऐसी कोई योजना होती नहीं थी तथा मुनिराज तो किसी को बताते नहीं, उस समय हजारों मुनिराज थे, इसलिए एक–दूसरे को जानना संभव भी नहीं था। उनका आचरण इतना निर्मल होता था कि उनके द्रव्यलिंग और भावलिंग का भी बाहर की चर्या देखने से पता नहीं चलता था। ऐसी स्थिति में वे मुनिराज क्या करें ? ह्न इसी का उत्तर देनेवाली गाथा २६२ इसप्रकार है ह्न

अब्भुट्ठाणं गहणं उवासणं पोसणं च सक्कारं।
अंजलिकरणं पणमं भणिदमिह गुणाधिगाणं हि।।२६२।।

(हरिगीत)

गुणाधिक को खड़े होकर अंजलि को बाँधकर।
ग्रहण–पोषण–उपासन–सत्कार कर करना नमन।।२६२।।

गुणों में अधिक (श्रमणों) के प्रति अभ्युत्थान, ग्रहण (आदर से स्वीकार), उपासन (सेवा), पोषण (उनके अशन, शयनादि की चिंता), सत्कार (गुणों की प्रशंसा), अंजलि करना (विनयपूर्वक हाथ जोड़ना) और प्रणाम करना यहाँ कहा है।

गाथा में कथित उपरोक्त कार्य मुनिराज अपने गुणों से अधिक गुणों वाले मुनिराजों के प्रति करते हैं तथा अपने गुणों से कम गुणोंवाले मुनिराजों को आशीर्वाद आदि देते हैं; लेकिन समस्या यह है कि जब पहली बार आपस में मिले तब क्या करें ? क्योंकि वे तो एक–दूसरों को जानते ही नहीं हैं कि किनमें गुण ज्यादा है और किनमें कम।

इस संबंध में आचार्यदेव ने लिखा है कि जब वे सर्वप्रथम मिले, तब एक–दूसरे को गुणाधिक मानकर ही विनय–व्यवहार करें तथा बाद में जब परिचय हो जावे, तब यथोचित व्यवहार करें।

इस संबंध में बहुत सारी बातें हैं, उनके बारे में यदि अधिक कहूँगा तो लोगों को अच्छा नहीं लगेगा; इसलिए इसके बारे में विस्तार से जानने हेतु प्रवचनसार की चरणानुयोगसूचक चूलिका ध्यान से पढ़ना चाहिए।

अब यदि कोई कहे कि 'हमें ज्यादा पढ़ने की क्या जरूरत है ? हमें मुनि थोड़े ही बनना है ?'

अरे भाई ! ऐसा नहीं है। हमें मोक्ष जाना है तो मुनि बनना ही है। 'हमें मुनि नहीं बनना है' ऐसी कल्पना भी कभी दिमाग में नहीं लाना चाहिए। यदि इस भव में मुनि नहीं भी बन सके, तब भी देव–शास्त्र–गुरु का सच्चा स्वरूप समझे बिना सम्यग्दर्शन अर्थात् धर्म की शुरुआत नहीं हो सकती; इसलिए भी देव–शास्त्र–गुरु का सच्चा स्वरूप समझने के लिए इस प्रकरण को पढ़ना चाहिए। ●

साधना चैनल पर

डॉ. भारिल्ल के प्रवचन

अब प्रातः 6.40 से 7.00 बजे तक

इसकी फोटो कापियाँ कराके उचित स्थानों पर लगा दें।

मन्दिरजी में सूचना देवें और देखने वाले मित्रों को भी बता दें।

1. ज्ञातव्य है कि दिनांक 1 नवम्बर 2006 से इन्दौर (म.प्र.) के भास्कर भक्ति टी.वी. चैनल पर भी प्रतिदिन रात्रि 9 से 10 बजे तक डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के नियमित प्रवचनों का प्रसारण हो रहा है। नवम्बर माह में होने वाले प्रवचनों का प्रसारण विजय-इन्द्रा, अशोक-आशा, विनी-मिनल, अनुभूति-वंदित एवं श्रीमती कमलप्रभा बड़जात्या द्वारा किया जा रहा है।

2. यदि कोई भाई-बहिन अपने यहाँ के केबल पर इसतरह के प्रवचनों का प्रसारण करना चाहे तो उन्हें प्रवचनों की कैसिट हम उपलब्ध करायेंगे।

17 नवम्बर 2006, मूल्य : 2/- आर. एन. आई. 31109/77 RJ / J. P. C / FN-064 / 2006-08

फैडरेशन शाखा का गठन

कानपुर (उ.प्र.) : यहाँ श्री वीतराग-विज्ञान प्रभावना मण्डल के संयोजन में किदवईनगर स्थित श्री पार्श्वनाथ दि. जैन मंदिर में दिनांक 17 सितम्बर, 2006 को युवाओं में धार्मिक रुचि उत्पन्न कराने के लिये अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन शाखा किदवईनगर का गठन किया गया।

अ.भा.जैन युवा फैडरेशन के अध्यक्ष के रूप में सर्वसम्मति से **पण्डित अनुभवप्रकाशजी शास्त्री** को मनोनित किया गया। साथ ही कार्यकारिणी में **उपाध्यक्ष** श्री मनोज जैन व अनूप जैन, **मंत्री** श्री चिदेश जैन, **कोषाध्यक्ष** श्री प्रदीप जैन, **प्रचार-मंत्री** श्री मुकेश जैन, श्री पारस जैन व श्री अंकुर जैन, **पाठशाला मंत्री** श्री पदम जैन व श्री आशीष जैन, **सांस्कृतिक मंत्री** श्री शैलेष जैन व श्री आनंद जैन तथा **कार्यवाहक मंत्री** श्री आलोक जैन व श्री जैनेन्द्र जैन को चुना गया।

सभी मंत्रियों को अपने-अपने पद की शपथ दिलाई गई। साथ ही संरक्षक मण्डल से श्री राजूभाई जैन, श्री केशवदेवजी जैन, श्री इन्द्रभानजी जैन व श्री शैशवचन्दजी जैन का उद्बोधन प्राप्त हुआ।

धर्म प्रभावना

श्री कुन्दकुन्द वीतराग-विज्ञान समिति उदयपुर द्वारा संचालित चल शिक्षण-शिविर के अन्तर्गत पण्डित अश्विनजी शास्त्री नौगामा द्वारा दिनांक 26 सितम्बर से 2 अक्टूबर तक डबोक, 3 अक्टूबर से 11 अक्टूबर तक लकडवास एवं दिनांक 26 अक्टूबर से 5 नवम्बर तक भिण्डर में लघु शिविरों का आयोजन किया गया।

शिविर में प्रत्येक जगह पर पूजन-विधान, विविध विषयों पर बाल-प्रौढ़कक्षा, प्रवचन व सांस्कृतिक कार्यक्रमों के माध्यम से धर्म प्रभावना हुई।

हार्दिक बधाई !

सोलापुर (महा.) : श्री टोडरमल दि. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के स्नातक **श्री रवीन्द्र काले शास्त्री** ने आचार्य शांतिसागर महाराज की पुण्यतिथि पर श्री श्राविका संस्था नगर द्वारा **मानव जीवन व पुरुषार्थ सिद्धि** विषय पर आयोजित 51वीं वक्तृत्व प्रतियोगिता में प्रथम स्थान प्राप्त किया; एतदर्थ आपको श्री रायचंद दोशी रजत ज्योत पुरस्कार से सम्मानित किया गया। जैनपथप्रदर्शक समिति की और से आपको हार्दिक बधाई !

(आगामी ...)

पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव

श्री ज्ञायक चैरिटेबल ट्रस्ट द्वारा संस्थापित **रत्नत्रय तीर्थ ध्रुवधाम** में विराजमान होनेवाले जिनबिम्बों का पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव **दिनांक 30 नवम्बर से 6 दिसम्बर, 06** तक आयोजित होने जा रहा है।

आप सभी से इस महा महोत्सव में पधारने हेतु हार्दिक आमंत्रण है। कृपया अपने पहुँचने की पूर्व सूचना देवें। - सम्पर्क, महीपाल ज्ञायक -9414103475, पं. राजकुमार जैन-9414103492

वैराग्य समाचार

1. सोनगढ़ निवासी श्रीमती निर्मलाबेन नरोत्तमदास दोशी का 92 वर्ष की आयु में 26 अक्टूबर, 2006 को सिकन्दराबाद में शांत परिणामोंपूर्वक देहावसान हो गया। आप सोनगढ़ में ही स्थायीरूप से रहकर तत्त्वज्ञान का लाभ लिया करती थीं। आप श्री मूलशंकर देसाई की सुपुत्री थी। आपके द्वारा दिये गये धार्मिक संस्कारोंवश आपकी दोनों सुपुत्रियाँ श्रीमती ऊषाबेन पंखानी एवं रेणुकाबेन कोठारी, सिकन्दराबाद भी निरन्तर तत्त्वज्ञान का लाभ लेती हैं।

2. मलकापुर निवासी डॉ. सुमतिचन्दजी जैन का 70 वर्ष की आयु में दिनांक 21 अक्टूबर को देहावसान हो गया। आप मलकापुर समाज के मार्गदर्शक के साथ-साथ धर्ममर्मज्ञ भी थे। स्थानीय मंदिरजी में प्रतिदिन प्रवचन किया करते थे।

3. मेरठ निवासी श्री जिनेन्द्रकुमारजी जैन का अस्वस्थता के कारण दिनांक 8 अक्टूबर को देहावसान हो गया है। आप शांत परिणामी व धार्मिक प्रवृत्ति के व्यक्ति थे। आपकी स्मृति में श्री प्रद्युम्नजी जैन की ओर से 101/- रुपये प्राप्त हुये।

दिवंगत आत्मायें शीघ्र ही निर्वाण की प्राप्ति करें - यही भावना है।

डॉ. भारिल्ल के आगामी कार्यक्रम

30 नव. से 6 दिसम्बर, 06	**बांसवाड़ा**	**पंचकल्याणक**
24 दिस. से 28 दिसम्बर	**देवलाली**	**विधान एवं शिविर**
23 से 25 जनवरी, 07	**चन्देरी**	**छहढाला शिविर**
25 से 31 जनवरी, 07	**बीना**	**पंचकल्याणक**
02 से 06 फरवरी, 07	**मंगलायतन**	**वार्षिकोत्सव**
15 से 21 फरवरी, 07	**अलवर**	**पंचकल्याणक**

चिंतन की धारा ...

आवश्यकता चिंतन और ध्यान के प्रशिक्षण की नहीं; अपितु सम्यक् दिशा निर्देश की है; क्योंकि चिंतन और ध्यान तो संज्ञी-प्राणी के सहज स्वभाव हैं। चिंतन की धारा और ध्यान का ध्येय यदि सम्यक् न हो, स्पष्ट न हो तो चिंतन और ध्यान भवताप नाशक न होकर भव-भव भटकाने के हेतु भी बन सकते हैं, अत: चिंतन की धारा का नियमन आवश्यक ही नहीं; अनिवार्य है। **ह्न बारह भावना: एक अनुशीलन, पृष्ठ-13**

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
प्रबन्ध सम्पादक : **पण्डित संजीवकुमार गोधा,**डबल एम.ए.जैनविद्या व धर्मदर्शन; इतिहास, नेट एवं **पण्डित जितेन्द्र वि.राठी,** साहित्याचार्य
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., एम. आई. रोड, जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, ए-4, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो निम्न पते पर भेजें -
ए- 4 बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
फोन : (0141) 2705581, 2707458
फैक्स : (0141) 2704127